

१. श्री धवलादि सिध्दान्तोंके प्रकाशमें आनेका इतिहास

सुना जाता है कि श्री धवलादि सिध्दान्त ग्रंथोंको प्रकाशमें लाने और उनका उत्तर भारतमें पठनपाठनद्वारा प्रचार करनेका विचार पंडीत टोडरमलजीके समयमें जयपुर और अजमेरकी ओरसे प्रारंभ हुआ था । किन्तु कोई भी महान् कार्य सुसंपादित होनेके लिये किसी महान् आत्माकी वाट जोहता रहता है । बम्बईके दानवीर, परमोपकारी स्व. सेठ माणिकचंदजी जे. पी. का नाम किसने न सुना होगा ? आजसे छप्पन वर्ष पहीले वि. सं. १९४० (सन् १८८३ ई.) की बात है । सेठजी संघ लेकर मूडविद्रीकी यात्राको गये थे । वहां उन्होंने रत्नमयी प्रतिमाओं और धवलादि सिध्दान्त ग्रंथोंकी प्रतियोंके दर्शन किये । सेठजीका ध्यान जितना उन बहुमूल्य प्रतिमाओंकी ओर गया, उससे कहीं अधिक उन प्रतियोंकी ओर आकर्षित हुआ । उनकी सूक्ष्म धर्मरक्षक दृष्टिसे यह बात छुपी नहीं रही कि उन प्रतियोंके ताडपत्र जीर्ण हो रहे हैं । उन्होंने उस समयके भट्टारकजी तथा वहांके पंचोंका ध्यान भी उस ओर दिलाया और इस बातकी पूछताछ की कि क्या कोई उन ग्रंथोंको पढ समझ भी सकता है या नहीं ? पंचोंने उत्तर दिया ‘हम लोग तो इनका दर्शन पूजन करके ही अपने जन्मको सफल मानते हैं । हां, जैनविद्री (श्रवणवेलगुल) में ब्रह्मसुरि शास्त्री हैं, वे इनको पढना जानते हैं’ । यह सुनकर सेठजी गंभीर विचारमें पड गये । उस समय इससे अधिक कुछ न कर सके, किन्तु उनके मनमें सिध्दान्त ग्रंथोंके उध्दारकी चिन्ता स्थान कर गई ।

यात्रासे लौटकर सेठजीने अपने परम सहयोगी मित्र, शोलापूरनिवासी श्री सेठ हीराचन्द नेमचन्दजी को पत्र लिखा और उसमें श्री धवलादि ग्रंथोंकी उध्दारकी चिन्ता प्रगट की, तथा स्वयं भी जाकर उक्त ग्रंथोंके दर्शन करने और फिर उध्दारके उपाय सोचनेकी प्रेरणा की । सेठ माणिकचंदजीकी इस इच्छाको मान देकर सेठ हीराचंदजीने दूसरे ही वर्ष, अर्थात् वि. सं. १९४१ (सन् १८८४) में स्वयं मूडविद्रीकी यात्रा की । वे अपने साथ श्रवणबेलगोलाके पण्डित ब्रह्मसूरि शास्त्रीको भी ले गये । ब्रह्मसूरिजीने उन्हें तथा उपस्थित सज्जनोंको श्री धवल सिध्दान्तका मंगलचरण पढकर सुनाया, जिसे सुनकर वे सब अतिप्रसन्न हुए । सेठ हीराचंदजीके मनमें सिध्दान्त

ग्रंथोंकी प्रतिलिपी करानेकी भावना दृढ हो गई और उन्होंने ब्रह्मसूरि शास्त्रीसे प्रतिलिपिका कार्य अपने हाथमें लेनेका आग्रह किया। वहांसे लौटकर सेठ हीराचंदजी बम्बई आये और सेठ माणिकचंदजीसे मिलकर उन्होने ग्रंथोंकी प्रतिलिपि करानेका विचार पक्का किया। किंतु उनके वहांसे लौटनेपर वे तथा सेठ माणिकचंदजी अपने अपने व्यावसायिक कार्योंमें गुंथ गये और कोई दश वर्षतक प्रतिलिपि करानेकी बात उनकेमनमें ही रह गई।

इसी बीचमें अजमेरनिवासी श्रीयुक्त सेठ मूलचंदजी सोनी, श्रीयुक्त पं. गोपालदासजी वरैयाके साथ मूडविद्रीकी यात्राको गये। उस समय उन्होंने सिध्दान्त ग्रंथोंके दर्शनकर वहांके पंचों और ब्रह्मसूरि शास्त्रीके साथ यह बात निश्चित की कि उन ग्रन्थोंकी प्रतिलिपियां की जाय। तदनुसार लेखनकार्य भी प्रारंभ हो गया। यात्रासे लौटते समय सेठ मूलचंदजी सोनी शोलापूर और बम्बई भी गये और उन्होंने सेठ हीराचंदजी व माणिकचंदजीको भी अपने उक्त कार्यकी सूचना दी, जिसका उन्होंने अनुमोदन किया। श्रीमान् सिंघई पन्नालालजी अमरावतीवालोंसे ज्ञात हुआ है कि जब उनके पिता स्व. सिंघई बंशीलालजी सं. १९४७ (सन १८९०) के लगभग मूडविद्रीकी यात्राको गये थे तब ब्रह्मसूरि शास्त्री द्वारा लेखनकार्य प्रारंभ हो गया था। किंतु लगभग तीनसौ श्लोक प्रमाण प्रतिलिपी होनेके पश्चात् ही वह कार्य बन्द पड गया, क्योंकि, सेठजी वह प्रतिलिपि अजमेरकेलिये चाहते थे और यह बात मूडविद्रीके भट्टारकजी व पंचोंको इष्ट नहीं थी।

इसी विषयको लेकर सं. १९५२ (सन १८९५) में सेठ माणिकचंदजी और सेठ हीराचंदजी के बीच पुनः पत्रव्यवहार हुआ, जिसके फलस्वरूप सेठ हीराचंदजीने प्रतिलिपि करानेके खर्चके लिये चन्दा एकत्र करनेका बीडा उठाया। उन्होंने अपने पत्र जैनबोधकमें सौ सौ रुपयोंके सहायक बननेके लिये अपील निकालना प्रारंभ कर दिया। फलतः एक वर्षके भीतर चौदह हजारसे उपरके चन्देकी स्वीकारता आ गई ! तब सेठ हीराचंदजीने सेठ माणिकचंदजीको शोलापुर बुलाया और उनके समक्ष ब्रह्मसूरि शास्त्रीसे एकसौ पच्चीस (१२५) रुपया मासिक वृत्तीपर प्रतिलिपि करनेकी बात पक्की होगई। उनकी सहायताके लिये मिरजनिवासी गजपति शास्त्री भी नियुक्त कर दिये गये। ये दोनों शास्त्री मूडविद्री पहुंचे और उसी वर्षकी फाल्गुन शुक्ला ७ बुधवारको ग्रंथकी प्रतिलिपि करनेका कार्य प्रारंभ हो गया। उसके एक माह और तीन दिन पश्चात् चैत्र शुक्ला १० को

ब्रह्मसूरि शास्त्रीने सेठ हीराचंदजीको पत्रद्वारा सूचित किया कि जयधवलके पन्द्रह पत्र अर्थात् लगभग १५०० श्लोकोंकी कापी हो चुकी । इसकेकुछ ही पश्चात् ब्रह्मसूरि शास्त्री अस्वस्थ हो गये और अन्ततः स्वर्गवासी हुए ।

ब्रह्मसूरि शास्त्रीके पश्चात् गजपति शास्त्रीने प्रतिलेखनका कार्य चालू रक्खा और लगभग सोलह वर्षमें धवल और जयधवलकी प्रतिलिपि नागरी लिपिमें पूरी की । इसी अवसरमें मूडविद्रीके पण्डित देवराज सेठी, शांतप्पा उपाध्याय तथा ब्रह्मय्य इंद्रद्वारा उक्त ग्रंथोंकी कानडी लिपिमें भी प्रतिलिपी कर ली गई । उस समय सेठ हीराचंदजी पुनः मूडविद्री पहुंचे और उन्होंने यह इच्छा प्रगट की कि तीसरे ग्रंथराज महाधवलकी भी प्रतिलिपि हो जाय और इन ग्रंथोंकी सुरक्षा तथा पठनपाठनरूप सदुपयोगकेलिये अनेक प्रतियां कराकर भिन्न भिन्न स्थानोंमें रक्खी जावें । किंतु इस बातपर भट्टारकजी व पंचलोग राजी नहीं हुए । तथापि महाधवलकी कानडी प्रतिलिपी पंडित नेमिराजजी द्वारा किये जानेकी व्यवस्था करा दी गई । यह कार्य सन १९१८ से पूर्व पूर्ण हो गया । इसकेपश्चात् सेठ हीराचंदजीके प्रयत्नसे महाधवलकी नागरी प्रतिलिपि पं. लोकनाथजी शास्त्रीद्वारा लगभग चार वर्षमें पूरी हुई । इस प्रकार इन ग्रंथोंका प्रतिलिपी कार्य सन १८९६ से १९२२ तक अर्थात् २६ वर्ष चला, और इतने समयमें इनकी कानडी लिपि पं. देवराज सेठी, पं. शांतप्पा इन्द्र, पं. ब्रह्मय्य इन्द्र तथा पं. नेमिराज सेठी द्वारा; तथा नागरी लिपि पं. ब्रह्मसूरि शास्त्री, पं. गजपति उपाध्याय और पं. लोकनाथजी शास्त्री द्वारा की गई । इस कार्यमें लगभग बीस हजार रुपया खर्च हुआ ।

धवल और जयधवलकी प्रतिके प्रकाश में बाहर निकलनेका इतिहास

धवल और जयधवलकी नागरी प्रतिलिपि करते समय श्री गजपति उपाध्यायने गुप्तरीतिसे उनकी एक कानडी प्रतिलिपि भी कर ली और उसे अपने ही पास रख लिया । इस कार्यमें विशेष हाथ उनकी विदुषी पत्नी लक्ष्मीबाईका था, जिनकी यह प्रबल इच्छा थी कि इन ग्रंथोंके पठनपाठनका प्रचार हो । सन १९१५ में उन प्रतिलिपियोंको लेकर गजपति उपाध्याय सेठ हीराचंदजीके पास शोलापूर पहुंचे और न्योछावर देकर उन्हें अपने पास रखनेके लिये कहा । किन्तु सेठजीने उन्हें

अपने पास रखना स्वीकार नहीं किया, तथा अपने घनिष्ठ मित्र सेठ माणिकचंदजी को भी लिख दिया कि वे भी उन प्रतियोंको अपने पास न रखें। उनके ऐसा करनेका यही कारण यही जाना जाता है कि वे मूडविद्रीसे बाहर प्रतियोंको न ले जानेके लिये मूडबिद्रीके पंचों और भट्टारकजी से वचनबद्ध हो चुके थे। अतएव प्रतियोंके प्रचारकी भावना रखते हुए भी उन्होंने प्रतियोंको अपने पास रखना नैतिक दृष्टिसे उचित नहीं समझा। तब गजपति उपाध्याय उन प्रतियोंको लेकर सहारनपुर पहुंचे, और वहां श्री लाला जम्बूप्रसादजी रईसने उन्हें यथोचित पुरस्कार देकर उन प्रतियोंको अपने मंदिरजीमें विराजमान कर दिया।

गजपति उपाध्यायने लालाजी को यह आश्वासन दिया था कि वे स्वयं उन कानडी प्रतियोंकी नागरी लिपी कर देंगे। किंतु पुत्रकी बीमारीके कारण उन्हें शीघ्र घर लौटना पडा। पश्चात् उनकी पत्नी भी बीमार हुई उनका देहान्त हो गया। इन संकटोंके कारण उपाध्यायजी फिर सहारनपुर न जा सके और सन् १९२३ में उनका भी शरीरान्त हो गया। लालाजीने उन ग्रंथोंकी नागरी प्रतिलिपि पण्डित विजयचंद्रय्या और पं. सीताराम शास्त्रीके द्वारा कराई। यह कार्य सन् १९१६ से १९२३ तक संपन्न हुआ। सन् १९२४ में सहारनपुरवालोंने मूडविद्रीके पं. लोकनाथजी शास्त्रीको बुलाकर उनसे कानडी और नागरी लिपियोंका मिलान करा लिया।

सहारनपुरकी कानडी प्रतिकी नागरी लिपि करते समय पं. सीताराम शास्त्रीने एक और कापी कर ली और उसे अपने ही पास रख लिया, यह लाला प्रद्युम्नकुमारजी रईस, सहारनपुर, की सूचनासे यह ज्ञात हुआ है। पर यह भी सुना जाता है कि जिस समय पं. विजयचंद्रय्या और पं. सीताराम शास्त्री कानडीकी नागरी प्रतिलिपि करने बैठे उस समय पं. विजयचंद्रय्या पढते जाते थे और पं. सीताराम शास्त्री सुविधा और जल्दीके लिये कागजके खरोंपर नागरीमें लिखते जाते थे। इन्हीं खरों पर उन्होंने पीछे शास्त्राकार प्रति सावधानीसे लिखकर लालाजीको दे दी, किंतु उन खरोंको अपने पास ही रख लिया, और उन्हीं खरोंपरसे पीछे सीताराम शास्त्रीने अनेक स्थानोंपर धवल जयधवल की लिपियां करकेदी। वे ही तथा उन परसे की गई प्रतियां अब अमरावती, आरा, कारंजा, दिल्ली, बम्बई, शोलापूर, सागर, झालरापाटन, इन्दौर, सिवनी, व्यावर, और अजमेरमें विराजमान हैं।

पं. गजपति उपाध्याय तथा पं. सीताराम शास्त्रीने चाहे जिस भावनासे उक्त कार्य किया हो और भले ही नीतिकी कसौटी पर वह कार्य ठीक न उतरता हो, किंतु इन महान् सिध्दान्त ग्रंथोंको सैकड़ों वर्षोंकी कैदसे मुक्त करके विद्वत् और जिज्ञासु संसारका महान् उपकार करनेका श्रेय भी उन्हींको है। इस प्रसंगमें मुझे गुमानी कविका निम्न पद्य याद आता है ---

पूर्वजशुद्धिमिषाद् भुवि गंगां प्रापितवान् स भगीरथभूपः ।

बन्धुरभूज्जगतः परमोऽसौ सज्जन है उपकारी ॥

सिध्दान्त ग्रंथोंकी प्रतियोंका इतिहास संग्रह करनेकेलिये हमने जो प्रश्नावली प्रकाशित की थी उसका जिन अनेक महानुभावोंने सूचनात्मक उत्तर भेजनेकी कृपा की। हम उन्हीं उत्तरोंके आधारसे पूर्वोक्त इतिहास प्रस्तुत करनेमें समर्थ हुए, इस हेतु हम इन सज्जनों का आभार मानते हैं ।

धवलादि सिध्दान्त ग्रंथोंकी प्रति - उध्दारसम्बन्धी प्रश्नावलीका उत्तर भेजनेवाले सज्जनोंकी नामावली -

- १ श्रीमान् सेठ रावजी सखारामजी दोशी, शोलापूर
- २ श्रीमान् लाला प्रद्युम्नकुमारजी रईस, सहारनपुर
- ३ श्रीमान् पं. नाथूरामजी प्रेमी, बम्बई
- ४ श्रीमान् पं. लोकनाथजी शास्त्री, मंत्री, वीरवाणी सिध्दान्त भवन, मूडविट्टी
- ५ श्रीमान् ब्र. शीतलप्रसादजी
- ६ श्रीमान् पं. देवकीनन्दनजी सिध्दान्तशास्त्री, कारंजा
- ७ श्रीमान् सिंघई पन्नालालजी वंशीलालजी, अमरावती
- ८ श्रीमान् पं. मक्खनलालजी शास्त्री, मोरेना
- ९ श्रीमान् पं. रामप्रसादजी शास्त्री, श्री. ऐ. पन्नालाल दि. जैन सरस्वती भवन, बम्बई
- १० श्रीमान् पं. के भुजवलीजी शास्त्री, जैन सिध्दान्तभवन, आरा

- ११ श्रीमान् पं. दयाचन्दजी न्यायतीर्थ, सत्तर्कसुधातरंगिणी पाठशाला, सागर
- १२ श्रीमान् सेठ वीरचंद कोदरजी गांधी, फलटन
- १३ श्रीमान् सेठ ठाकुरदास भगवानदासजी जव्हेरी, बम्बई
- १४ श्रीमान् सेठ मूलचन्द किशनदास जी कापडिया, सूरत
- १५ श्रीमान् सेठ राजमल जी बडजात्या, भेलसा
- १६ श्रीमान् गांधी नेमचंद बालचंदजी, वकील, उस्मानाबाद
- १७ श्रीमान् बाबू कामताप्रसादजी, सम्पादक वीर, अलीगंज